महाकवि विद्यापति की पदावली में गीति–तत्त्व

डॉ. आर.पी. वर्मा,
असि. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

हृदय में उठनेवाले भावावेगों को बड़े ही सुंदर शब्दों में संगीतात्मकता के साथ व्यक्त करना ही गीति–काव्य है। मानव–सृष्टि के साथ संगीत का उदय हुआ और इसी संगीत से जुड़ा हुआ प्रसंग है काव्य। काव्य के तीन तत्व–बुद्धितत्व, कल्पना–तत्त्व तथा भाव–तत्व माने जाते हैं, जिनमें से भाव एवं कल्पना काव्य में प्रधान होते हैं। कवि हृदय की मार्मिक अनुभूतियों एवं भावों को उतार–चढ़ाव के साथ व्यक्त करता है तथा पाठक उसे पढ़कर रस में निमग्न हो जाता है। यही कारण है कि गीतिकाव्यकार को किसी विशेष विषय या भाव की सीमा में नहीं बांधा जा सकता। एक बात अवश्य है कि मानव के हृदय का मूल–भाव प्रेम है, अतः अधिकतर गीतिकाव्यों में प्रत्यक्ष या परोक्षरूप से यही भाव प्रबल रहता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि गीति–काव्य–परंपरा कैसे ओश्र कब प्रारंभ हुई। डॉ. कीथ के अनुसार, पदों की परंपरा 'गीतगोविंद' से प्रारंभ हुई। वहीं श्री एच.टी. पेक ने उसकी उत्पत्ति के विषय में अपने विचार व्यक्त किए कि गीतिकाव्य कविता का सर्वाधिक सहज प्रकार होने के कारण निश्चित रूप से सर्वप्रथम उत्पन्न हुआ, अन्य दूसरे चेष्टाजन्य रूप निश्चित ही इसके बाद और इसी से उत्पन्न हुए (The Lyrics of Tennyson)। मेरा यह मानना है कि गीतिकाव्य पूर्णतः बुद्धि–व्यापार से उत्पन्न काव्य नहीं, अतः मानव के अति पुरातन और आरंभिक भावों के साथ ही गीतिकाव्य का जन्म हुआ। जब भाषा नहीं थी, तब मानव अपनी अनुभूतियों को आंगिक चेष्टाओं से व्यक्त करता था। तत्पश्चात् शनैः–शनैः भाषा का आविष्कार हुआ तो केवल गीत गाए जाते थे। पूरी गीतिकाव्य–परंपरा को देखें तो उसका बदलता रूप हम स्वयं देख सकते हैं। वैदिकयुग में धार्मिक एवं वीरगाथात्मक गीतियों की प्रधानता है। यदि हम 'ऋग्वेद' की कुछ ऋचाओं को देखें तो टेक शैली या रूढ़ि ध्रुवक का मूल मिलता है– उदाहरणतया–'कस्मैदेवाय हविषाविधेम', 'तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु' को लिया जा सकता है। गीति–परंपरा का दूसरा युग भक्ति–भाव–प्रधान गीतियों का है। तीसरा काल सहज प्रेम–गीतों तथा चौथे में प्रेम–गीत के साथ आध्यात्मिकता एवं रहस्यात्मकता के साथ श्रृगांर का समावेश है।

संस्कृत में विशाल साहित्य होने के बावजूद दसवीं शती के पहले बहुत अच्छी श्रेणी का गीतिकाव्य नहीं था, इसलिए जयदेव के 'गीतिगोविन्द' को सुंदर एवं कौशलयुक्त गीतिकाव्य मान सकते हैं। जयदेव के पश्चात् सच्चे अर्थों में गीतितत्वों को आधार बनाकर लिखनेवालों में कविवर विद्यापति का नाम आता है। यह संधिकाल के कवि थे। अतः पदावली में श्रृगांर एवं भक्ति दोनों का समन्वय है। गीतितत्वों के आधार पर विद्यापति पर विचार करने से पहले मैं गीतितत्व की परिभाषा देना चाहूँगी–

(1) गीतिकाव्य कल्पना की गति है, जिसके द्वारा ससीम–मानवात्मा असीम के साथ संबंध होने का प्रयत्न करती है।

(2) गीतिकाव्य इकहरे विचार, अनुभूति या स्थिति का चित्रण है, जिसमें संक्षिप्तता, मानवीय भावना का रंग और गति अवश्य होनी चाहिए।

छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा भी कहती हैं कि 'संभव है, जिस प्रकार प्रभात की सुनहली रश्मि छूकर चिड़िया आनन्द से चहचहा उठती है, जिस प्रकार मेघ को घुमड़ता–घिरता देखकर मयूर नाच उठता है, उसी प्रकार मनुष्य ने भी पहले–पहले अपने भावों का प्रकाशन ध्वनि एवं गति द्वारा किया होगा।

जयदेव के 'गीतिगोविंद' के पश्चात् हिन्दी में सर्वप्रथम गीतिकाव्य लिखने का श्रेय निश्चित रूप से विद्यापति को है। हमें यह समरण रखना होगा कि विद्यापति संधिकाल के दरबारी कवि थे। उनके आश्रयदाता शिवसिंह थे, जिनकी मृत्यु के पश्चात् उन्होंने कविता करना ही छोड़ दिया था। उनकी प्रमुख कृतियों में –

1. **कीर्तिकाल–कीर्ति सिंह पर लिखित।**
2. **कीर्तिपताका– कीर्ति सिंह के प्रेम–प्रसंगों पर आधारित।**
3. **भू–परिक्रमा– शिवसिंह की आज्ञा से रचित भूगोल–संबंधी ग्रंथ।**
4. **पुरूष–परीक्षा–शिवसिंह की आज्ञा से रचित दंडनीति–विषयक ग्रंथ।**
5. **शैवसर्वस्वसार–शैव सिद्धांत–ग्रंथ–विश्वासदेवी की आज्ञा से रचित।**
6. **गंगा–वाक्यावली– गंगा–वंदना।**
7. **दुर्गाभक्ति–तरंगिणी–धीरसिंह की आज्ञा से रचित।**

इनके अतिरिक्त और भी कई प्रसिद्ध रचनाएं राजा या रानी की आज्ञा पर लिखी गई, किंतु उन्हें जो प्रसिद्धि मिली वह उनके पदों के कारण है, जिनकी संख्या करीब पांच सौ है। ये पद विद्यापति की पदावली कहे जाते हैं तथा उनकी अक्षय कीर्ति के आधार हैं। इन पदों में श्रृगांर एवं भक्ति दोनों प्रकार के विषय हैं, जो आज भी मिथिला जनपद में गाए जाते हैं। इन गीतों की प्रसिद्धि का कारण उन गीतों का विषय नहीं, बल्कि लयात्मकता एवं लाक्षणिकता है। गीतितत्वों के आधार पर विद्यापति की पदावली पर दृष्टिपात करें तो इनकी पदावली में निम्न गीतित्व पाए जाते हैं–

संगीतात्मकता, ध्वन्यात्मकता, प्रतीकात्मकता, लाक्षणिकता, काल्पनिकता, आत्मनिष्ठता, भावप्रवणता इत्यादि।

संगीतात्मकता के कारण विद्यापति के गीत आज भी मिथिला जनपद के घर–घर में गाए जाते हैं। इनके गीतों में संगीतात्मकता के दो रूप हैं– एक शास्त्रीय रूप, जो विभिन्न राग–रागिणियों से आबद्ध होकर संगीत का विषय बनता है तो दूसरा जनसामान्य रूप, जो राग–रागिणियों में नहीं बांधता, मुक्त है, जैसे–

श्रवण सुनिअ तुम नाम रे।
जगत विदित सब ठाम रे।।
तुअ गुन बहुत पसार रे।
ताहि कतहु नहि पार रे।।

इसी प्रकार वसंतराग का उदाहरण देखें–

ओतएक तन्त उदन्त न जानिअ।
एतए अनल बम चन्दा।।
सौरभ सार भार अरूझाएल।
दुई पंकज मिलु मन्दा।।

ध्वन्यात्मकता संगीतात्मकता का ऐसा तत्व है, जो कवि की रचना को सौंदर्य प्रदान करता है।

देवी–स्तुति में कवि ने देवी की सुंदर स्तुति करते हुए कहा–

घन घन घनन घुघुर कत बाजए, हन हन कर तुअ काता।

प्रतीकों का साहित्य में, विशेषकर काव्य–साहित्य में विशेष महत्व होता है।

संपूर्ण पदावली में विभिन्न प्रकार के प्रतीकों के प्रयोग से बड़े–बडे बिंब प्रस्तुत किए गऐ हैं, जैसे–

सामर बरन नैन अनुरंजित, जलद–जोग फुल कोका।

नख–शिख वर्णन में हमें अनेक प्रतीक दृष्टिगोचर होते हैं, यथा–

पीन पयोधर दूबरिगता, मेरू उपजल कनक लता।

अथवा–

माधव की कहब सुन्दरि रूपे।

कतेक जतन बिहि आनि समारल देखल नयन सरूपे

पल्लवराज चरन जुग सोभित गति गजराजक बाने

कनक कदिल पर सिंह समारल तापर मेरू समाने।

लाक्षणिकता एंव काल्पनिकता कवि की कविता की जान है। बड़े ही कम शब्दों में लाक्षणिक भाव प्रकट कर देना विद्यापति की विशेषता रही है, जैसे–

चांद सार लए मुख घटना करू लोचन चकित चकोरे

अभिय धोय आंचर धनि पोछलि दह दिसी भेल उजोरे।

कवि की कल्पना की ऊंची उड़ान वहां तक पहुंच जाती है, जहां सभी उपमान झूठे पड़ जाते हैं, जैसे–

नाभि बिबर सयं राम लतावलि भुजंगि निसास पियासा

नासा खगपति चंचु भरम–भय कुच–गिरि संधि निवासा।

और–

नयनलिनि दओ अंजन रंजई भौंह बिभंग बिलासा

चकित चकोर जोर बिधि बांधल केवल काजर पासा।

आत्मनिष्ठता संगीतात्मकता का प्रमुख तत्व है। कई विद्वान् यह मानते हैं कि गीतिकाव्य आत्मपरक होता है, क्योंकि उसमें मानवीय संवेदनात्मक तत्वों–इच्छा, संवेग, भावना–की प्राधनता होती है। कवि ने व्यक्तिगत गीत लिखे हैं–

एहि भवसागर थाह कतहु नहि, भैरव धरू करआए हे भोला

भनई विद्यापति मोर भोलानाथ गति देहु अभय बर (मोहिं हे भोला)

अथवा–

अगना रे मोर कतय गेला कतय गेला शिव कि दहुँ भेला

भाँग नहि बटुआ रूसि वैसलाह जोहि हेरि ओनि देल

हँसि उठलाह

जे मोर कहता उगना उदेस, तिनका देबयन कंगनाक बेस

नन्दन बनमें भेंटला महेशः, मन भेल हरषित मेटल कलेश

भनई विद्यापति उगना सों काज, नहि हितकर मोर (त्रिभुवन राज)

आत्मनिष्ठता की तरह भावप्रवणता भी गीतिकाव्य का प्राण–तत्व है, जो कवि जितना भाव–प्रवण होगा, उसका काव्य उतना ही सफल एवं सुंदर होता है। भावप्रवणता भी संगीतात्मकता या गीतितत्व का प्राण है। कविवर विद्यापति पर जयदेव का स्पष्ट प्रभाव है। विद्यापति ने जो कुछ गाया, उसका अनुसरण कई परवर्ती कवियों ने किया। भावों को छिपाना नहीं, प्रकट करना उनका उद्देश्य रहा है। भावों के लिए उन्होंने प्रेम, संकेत, व्यंग्क, अभिसार, छलना, मान, विरह, उल्लास इत्यादि अनेके भावों का सटीक वर्णन किया है। कृष्ण–राधा का प्रेमावेग व्यक्त करते हुए कवि कहते हैं–

ससन परस खसु अम्बर रे देखल धनि देह।

नव जलधर तर संचर रे जनि बिजुरी रेह।।

कृष्ण को वस्त्र में छिपा राधा का शरीर वैसा ही जान पड़ता है, जैस जलधरों में बिजली की रेखा चमक जाती है। कृष्ण–राधा के रूप पर रीझ जाते हैं, वही राधा कृष्ण के सौंदर्य पर रीझ कर कहती हैं–

की लागि कौतुक देखलौं सखि निमिष लोचन आधा।

मोर मन मृग मरम बेघल विषम बान बेआध।।

उल्लास–भाव व्यक्त करते हुए कवि कहते हैं कि मेरे आंगन में चंदन का गाछ (पेड़) है, जिसपर काग कुरराता है। चारों ओर चंपा, मौलसिरि फूले हैं, चांद की उजयारी फैली है–

मोरा अंगनवा चनन केरि गछिया,

ताहि चढ़ि कुररय काग रे।

सोने चोंच बांधि देब तोयें बायस,

जओं पिया आवत आज रे।

चओदिस चम्पा मओली फूललि,

चान उजोरिया राति रे।

इस प्रकार विद्यापति ने अपनी पदावली में गीतिकाव्य के सभी तत्वों का समावेश किया है, सभी गीतिकाव्यकारों ने इनके भावों को अपनाया है। इनके पश्चात् सूरदास ने इन्हीं की शैली पर 'सूरसागर' की रचना की। उनके पश्चात् गीतिकाव्य लिखनेवाले बहुत लोग हुए, किंतु उन्हें ही हिंदी का प्रथम कृष्ण–काव्य–कवि मान सकते हैं। उन्हें गीतिकाव्य–परंपरा का प्रवर्तक कह सकते हैं। भक्ति के साथ श्रृंगार का समन्वय उनकी रचना को एक ऐसा शीर्ष प्रदान करता है, जो आगे आनेवाली पीढ़ी के लिए दीप–स्तंभ है। आज यह कहा जाता है कि आज की कविता ने अपने को युगानुकूल बनाने के लिए न केवल कलेवर, बल्कि विषयवस्तु भी बदली है, किन्तु कहीं–न–कहीं गीतितत्व प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप में जीवित हैं। मानव कितना ही बुद्धिवादी हो जाए; किंतु एक बात सत्य है कि बुद्धि से भावना ही प्रबल होती है। जब–तक सृष्टि में गीतिकाव्य लिखे जाते रहेंगे, इस साहित्यिक यात्रा में विद्यापति एक कवि के रूप में हमेशा स्मरण किए जाते रहेंगे।

सन्दर्भ

- हिन्दी काव्य के प्रमुख कवि खण्ड–3– डॉ0 आर0पी0 वर्मा
- हिन्दी साहित्य का इतिहास– आचार्य राम चन्द्र शुक्ल
- हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास– रामस्वरूप चतुर्वेदी
- विद्यापति–शिवप्रसाद सिंह
- विद्यापति का काव्य और काव्य भाषा– लालसा यादव

Copyright © 2017, Dr. R.P.Verma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.